बच्चों के सीखने-सिखाने में भाषाओं का संतुलन

– अनुराग बेहार

आम समझ व सीधी बात कर्नाटक के मुख्यमंत्री का विशेष गुण लगता है। ऐसा सरकारी स्कूलों में शिक्षा के माध्यम याने कि मीडियम ऑफ इंस्ट्रक्शन (एमओआई) के रूप में अंग्रेजी के इस्तेमाल को लेकर उनके रुख और बयानों में साफ तौर पर दिखाई देता है। उन्होंने जो कुछ कहा उसका लब्बोलुआब यह है कि हर कोई चाहता है कि उसका बच्चा इस देश में अंग्रेजी सीखे क्योंकि यह सामाजिक और आर्थिक गतिशीलता के लिए अहम है। जब सार्वजनिक स्कूल इस तीव्र आवश्यकता के प्रति उत्तरदायी नहीं हैं तो लोग अपने बच्चों को निजी स्कूलों में भेजते हैं। गरीब परिवारों के पास निजी स्कूलों में भेजने का विकल्प नहीं है। इस प्रकार पब्लिक स्कूलों में अंग्रेजी में अच्छी शिक्षा की पेशकश न कर पाने से जो वंचित हैं और पीड़ित हैं उनके साथ भेदभाव किया जा रहा है। मुख्यमंत्री के संदेश में यह भी निहित है कि कई विषयों में से एक अंग्रेजी के रूप में पढ़ाना अपर्याप्त है। इससे भाषा में प्रवाह नहीं आ पाता है जैसा कि भाषायी परिवेश कन्नड़ (या अन्य स्थानीय भाषाओं) का है।

ज्यादातर लोग मुख्यमंत्री की बात को सच मानेंगे। अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय द्वारा किए गए हमारे हालिया अध्ययन स्कूल च्वाइस इन लो इन्फर्मेशन एनवॉयरमेंट (कम सूचना वाले वातावरण में स्कूल का चुनाव) अन्य समान अध्ययनों की तरह उनके बयानों की सत्यता की पुष्टि करते हैं। यह बिल्कुल साफ है कि देश भर में अभिभावक अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम स्कूल में पढ़ाना चाहते हैं। सच्चाई जो भी हो मगर अधिकांश निजी स्कूल तो अंग्रेजी माध्यम होने का दावा भी करते हैं।

इन सबमें आश्चर्य की बात यह है कि कर्नाटक के मुख्यमंत्री ने इन बयानों को सार्वजनिक रूप से दिया है और कर्नाटक में बुद्धिजीवियों के एक प्रभावशाली वर्ग के हमले का सामना करना जारी है। उनके हमलावरों का तर्क है कि मीडियम ऑफ इंस्ट्रक्शन के रूप में

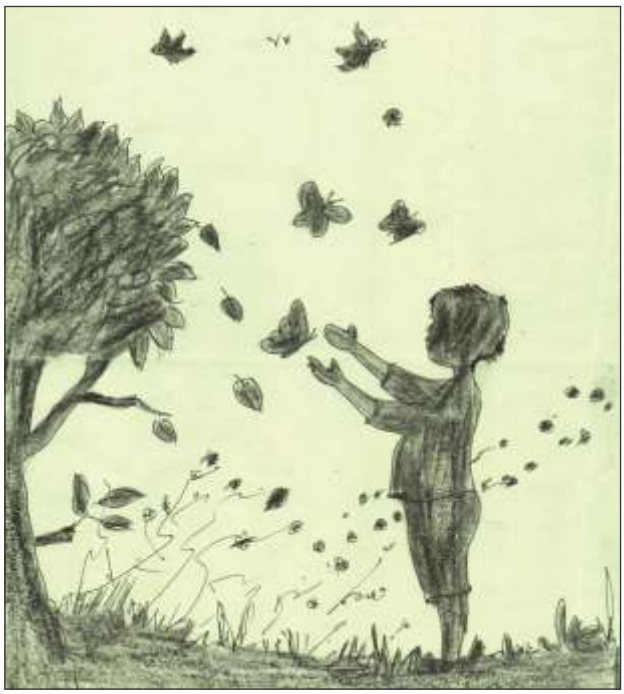

अंग्रेजी में स्विच करने से कन्नड़ भाषा और इसकी जीवंत संस्कृति कमजोर होगी। हालांकि इन दावों में सच्चाई का तत्व बेबुनियाद है। इस मामले में उनका समग्र आकलन बहुत ही भयावह है। इस तरह के अतिरेक से यह आभास होता है कि दांव अकल्पनीय रूप से ऊंचा है। असल में जब छात्रों को वर्तमान नीति के जरिए, निजी स्कूलों की ओर धकेला जाता है तो कन्नड़ को उतना ही बुरा नुकसान होगा, इसके बदले एक संतुलित नीति इन दोनों मामलों को संबोधित कर सकती है। इसके अलावा राज्य में कन्नड़ को बढ़ावा देने के लिए और भी अनेक साधन हैं। जीवंत भाषायी संस्कृति को बचाए रखने के लिए स्कूली शिक्षा मात्र एक प्रमुख साधन नहीं हो सकती।

स्थिति और अधिक भयावह हो गई है, क्योंकि मुख्यमंत्री अपने सादे बोल के साथ आगे बढ़ चुके हैं और उन पर हमला करने वालों को वे 'दोगला' पुकार रहे हैं। यह कहते हुए कि उनमें से अधिकांश के बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में भेजा गया है। हम यह नहीं जानते

कि यह प्रकरण कैसे खत्म होगा। लेकिन यह खुलासा करता है इस बात का दिलचस्प उदाहरण देते हुए कि कैसे शिक्षा की विरोधी मांगों को तर्कसंगत समर्थन देते हुए पूरा करके संतुष्ट करना है। आखिर ऐसे दावेदारों के बीच शिक्षा की नीतियां बनाने वाले लोग कैसे निर्णय लेते होंगे? बच्चों पर केंद्रित दो बुनियादी शैक्षिक सवालों के साथ इस पर बातचीत करना उपयोगी होगा। पहला है बच्चे सीखते कैसे हैं? और दूसरा बच्चों को क्या सीखना चाहिए?

भाषाओं के सीखने के संदर्भ में इन सवालों के जवाब मुश्किल नहीं है। प्रारंभिक तौर पर बच्चे पढ़ना और लिखना तब बेहतरी से सीखते हैं जब उनकी अपनी घरेलू भाषा का इस्तेमाल किया जाता है। यह आयु वर्ग कक्षा एक से तीन तक के लिए होती है। उसी अवधि के दौरान और आठवीं कक्षा तक की भी बात की जाए तो बच्चों में सहजता के साथ अनेक भाषाओं को सीखने की क्षमता होती है। उनके परिवेश के समाज–संस्कृति की भाषा आसानी से सीखी जाती है। जो भाषाएं उनके परिवेश की नहीं है उन्हें सीखने में अधिक प्रयास और तरीकों की जरूरत होती है इस उम्र में सीखना आसान होता है बशर्ते व्यवस्थित ढंग से सिखाया जाए।

प्रारंभिक तौर पर बच्चे पढ़ना और लिखना तब बेहतरी से सीखते हैं जब उनकी अपनी घरेलू भाषा का इस्तेमाल किया जाता है। यह आयुवर्ग कक्षा एक से तीन तक के लिए होता है। उसी अवधि के दौरान और आठवीं कक्षा तक की भी बात की जाए तो बच्चों में सहजता के साथ अनेक भाषाओं को सीखने की क्षमता होती है। उनके परिवेश के समाज संस्कृति की भाषा आसानी से सीखी जाती है। जो भाषाएं उनके परिवेश की नहीं हैं उन्हें सीखने में अधिक प्रयास और तरीकों की जरूरत होती है इस उम्र में सीखना आसान होता है बशर्ते व्यवस्थित ढंग से सिखाया जाए। जैसे कि बच्चों को कौन सी भाषाएं सीखनी चाहिए? इसका जवाब कठिन नहीं है। उन्हें एक से अधिक भाषायें सीखनी चाहिए।

जैसे कि बच्चों को कौन सी भाषाएं सीखनी चाहिए? इसका जवाब कठिन नहीं है। उन्हें एक से अधिक भाषायें सीखनी चाहिए। व्यावहारिक उपयोगिता के साथ, हमारे देश व दुनिया को शामिल करते हुए, कई भाषाओं (खासकर अंग्रेजी) को जानना स्पष्ट है। इसके अलावा, पिछले कुछेक दशकों में संज्ञानात्मक व सामाजिक क्षमताओं के विकास को लेकर किए गए बहुभाषी क्षमता के अन्य प्रकार के सकारात्मक प्रभावों के शोध प्रमाण उपलब्ध हैं।

इन सबके निहितार्थ है कि मीडियम ऑफ इंस्ट्रक्शंस की कठोर धारणा को बदलने और उसके प्रति अधिक लचीले नजरिए को अपनाने की जरूरत है। कक्षा एक से तीसरी के पाठ्यक्रम को इस तरह से बनाना चाहिए, जहां शिक्षकों ने बच्चों के साथ अपनी घरेलू भाषा का इस्तेमाल करते हुए कई भाषाओं में बुनियादी पढ़ने व लिखने की क्षमताओं का समर्थन किया है जैसा कि भारत में प्रमुख रूप से क्षेत्रीय भाषा (उदाहरण के तौर पर कन्नड़ या हिंदी) अक्सर बच्चे की घरेलू भाषा नहीं है (जैसे कि टूलू और उर्दू या भीली और मेवाड़ी) इसके लिए पाठ्यक्रम के दृष्टिकोण पर पुनःकल्पना करने की जरूरत होगी कि अनेक शिक्षक पहले से ही इस तरह का काम करते रहे है। उच्च कक्षाओं में कई भाषाएं विषयों के रूप में जारी रह सकती है जबकि मीडियम ऑफ इंस्ट्रक्शंस इस स्तर पर भी लचीला हो सकता है। उदाहरण के लिए इतिहास किसी एक भाषा में। सीखा जा सकता है और भूगोल किसी दूसरी भाषा में जो इन भाषाओं के साथ मिलकर काम करता है, क्योंकि जिसका अध्ययन स्वयं में विषयों के रूप में किया जाता है।

कर्नाटक में इस नजरिए को अपनाने से कन्नड़ के महत्व को कम किए बिना अंग्रेजी सीखने की व्यापक सामाजिक जरूरत का जवाब मिलेगा। कर्नाटक सरकार एक कल्पनाशील दृष्टिकोण पर विचार कर रही है। असल में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 के त्रि–भाषा–सूत्र को, देश भर में एक मीडियम ऑफ इंस्ट्रक्शंस को लचीले दृष्टिकोण के साथ प्रभावी बनाया जा सकता है। शिक्षा के सबसे विवादास्पद मामलों को सुलझाना संभव है यदि उन्हें उसी तरह से सुलझाया जाए जो बच्चे के लिए शिक्षा के रूप में है न कि राजनीति या समाजशास्त्रीय परियोजना के रंगमंच के रूप में।

(लेखक अज़ीम प्रेमजी फांउडेशन के सीईओ तथा अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर हैं)

साभार : सुबह सवेरे